प्रकाशक

कबीर पारख संस्थान

संत कबीर मार्ग, प्रीतम नगर, इलाहाबाद–211011

Visit us : www.kabirparakh.com

E-mail : kabirparakh@yahoo.com

पहली बार वि० सं० 2069 सन् 2012

सत्कबीराब्द 614

ISBN : 978-81-8422-206-7

© **कबीर पारख संस्थान**

मूल्य : ₹ 275.00

मुद्रक

इण्डियन प्रेस प्रा० लि०

पन्ना लाल रोड, इलाहाबाद

Mahabharat Mimansa : ABHILASH DAS

समर्पित

उन संतों, सज्जनों और देवियों
के कर-कमलों में जो
सत्य के निष्पक्ष
खोजी
हैं।

भूमिका

पुरु-वंश-परंपरा के प्रतापवान राजा दुष्यंत और महर्षि कण्व की पोष्य-पुत्री शकुंतला से भरत का जन्म हुआ। भरत प्रतापवान राजा हुए। शतपथ ब्राह्मण (, , , -) भी कहता है-*"शकुंतला नाडपित्यप्सरा भरतंदधे।* नाडपित में अप्सरा शकुंतला ने भरत को जन्म दिया, जिसने सब पृथ्वी को जीतकर यज्ञ के योग्य एक सहस्र घोड़ों को इंद्र के लिए बांधा। भरत की बड़ाई को न पहले किसी ने पाया, न पीछे। न पांचों जातियों में। कोई आदमी आकाश को हाथों से नहीं छू सकता।" भरत की परंपरा में आगे कौरव-पांडव हुए जो भरतवंशी कहलाये और इससे कौरव-पांडव भारत कहलाते थे। कौरव-पांडव की कथा को भी भारत कहा गया और यह कथा बहुत बड़ी हुई, इसलिए इसका नाम महाभारत हुआ। राजा भरत के नाम से इस देश का नाम भारत पड़ा।

महाभारत संस्कृत-साहित्य का विश्वकोश तो है ही, विश्व का सबसे बड़ा महाकाव्य और व्यवहार-परमार्थ दोनों क्षेत्रों का विश्वकोश है। महाभारत की महिमा में इसके प्रथम अध्याय में ही कहा गया है-"पुराकाल में सब देवता मिलकर तराजू के एक पलड़े पर चारों वेदों को तथा दूसरे पलड़े पर महाभारत को रखे, तो महाभारत भारी निकला। इसी से इसका नाम महाभारत कहा जाने लगा।" अंत में कहा गया-"अठारह पुराण, संपूर्ण धर्मशास्त्र और छहों अंगों सहित चारों वेद एक ओर तथा केवल महाभारत दूसरी ओर, यह अकेला ही उन सबके बराबर है।"

वेद वेद हैं, वे केवल भारत के नहीं, विश्व के प्रथम सर्वज्ञानकोश हैं; परंतु ज्ञान के विकास-क्रम में संपन्न होने से महाभारत सर्वसामान्य के लिए अत्यंत उपयोगी सिद्ध हुआ है।

महाभारत शब्द भारतीय जनता में कलह, लड़ाई एवं युद्ध का पर्याय बन गया है। जब लोग अधिक विवाद करने लगते हैं, तब उनसे अन्य लोग कहते हैं-"क्या यार, महाभारत कर दोगे?" परंतु यदि महाभारत केवल युद्ध का ग्रंथ

. **आदि पर्व, पहला अध्याय, श्लोक - ।**

. **स्वर्गारोहण पर्व, अध्याय पांच, श्लोक - ।**

होता, तो आज तक लुप्त हो गया होता अथवा पुस्तकालयों में धूल चाटता होता। इसकी ऐसी अद्‌भुत रचना हुई है कि कौरव-पांडवों के बीच हुए राग-द्वेष, छल-कपट, कलह और युद्ध के अंतराल में भी ऐसे वचन हैं जिनसे प्रेरणा लेकर मनुष्य अपना सुधार कर सकता है।

महाभारत में केवल युद्ध नहीं है। इसमें वेदों, उपनिषदों, पुराणों के रहस्य भरे ही हैं, यह सांख्य, योग और प्रज्ञादर्शन का भंडार है। बिना नाम लिए जैनों के तथा अधिकतम बौद्धों के विज्ञानवाद और वैराग्य का जगह-जगह विशद वर्णन है। मक्खली गोशाल, अजित केशकंबल आदि दार्शनिक तपस्वियों के नियतिवाद, अक्रियवाद, सम्यकवाद आदि जो जैन-बौद्ध ग्रंथों में पाये जाते हैं उनका विस्तार से वर्णन है। भूत, वर्तमान और भविष्य वर्णन; बुढ़ापा, मृत्यु, भय, व्याधि का कारण अविद्या तथा उससे छूटने का उपाय; अनेक संप्रदायों और आश्रमों के लक्षण, चतुर्वर्ण्य विधान भी है तथा इससे हटकर शुद्ध मानवता का प्रतिपादन है। तपस्या, ब्रह्मचर्य, त्याग-वैराग्य तथा गृहस्थधर्म की व्यापकता और सबसे ऊपर संन्यास की प्रतिष्ठा एक साथ प्रतिपादित है। वनों, पर्वतों, नदियों, तीर्थों, समुद्रों से संपन्न बृहत्तर भारत का वर्णन है।

नल-दमयंती की बृहत रोचक कथा जो सिंध, चेदि, अयोध्या और विदर्भ में घूमती है, जिसके पश्चिमी देशों में अनेक अनुवाद हो चुके हैं; सत्यवान-सावित्री के उदात्त चरित्र; सूखे वेदपाठी ब्राह्मण को पतिव्रता स्त्री तथा मिथिला के मातृ-पितृ-भक्त धर्मव्याध के उदात्त ज्ञानोपदेश; सत्यभामा के सामने द्रौपदी द्वारा उदात्त पातिव्रत-धर्म प्रवचन; युधिष्ठिर द्वारा सर्प रूपधारी नहुष के, तथा यक्ष के प्रश्नों के उत्तर, अनेक स्वर्णिम प्रसंग इसमें हैं ही, इसी में जगत-प्रसिद्ध गीता की ज्ञानगंगा बहती है। विदुर नीति, अनुगीता, पराशरगीता; युद्ध न हो, इस उद्देश्य को लेकर श्रीकृष्ण महाराज का कौरव-सभा में गौरवपूर्ण भाषण और उनका जहां कहीं भी वक्तव्य होता है, अत्यंत प्रभावशाली रहता है। शांति पर्व तो महाभारत का हृदय ही है जिसमें राजनीतिधर्म, आपद्धर्म और इन दोनों से बड़ा मोक्षधर्म की गंगा-गोदावरी बहती है जो अद्‌भुत ज्ञान-वैराग्यवर्द्धक है।

ओल्डेनवर्ग के कथनानुसार "महाभारत कहानियों का विकट जंगल हो गया है," परंतु यह इतना रोचक और प्रेरणाप्रद है कि आल्हा के स्वर में कहें, तो "देखे बने कहे कछु नाय" कहना पड़ेगा। चूहे, सियार, गीध आदि जानवरों के मुखों से लेखकों ने ऐसी चुटीली प्रेरणाप्रद तथा ज्ञानवर्द्धक बातें कहलायी हैं कि सहृदय मनुष्य का मोह-भंग हो जाय। बृहत्तर भारत ही नहीं, एशिया महाद्वीप की कहानियां अपने रूप बदल-बदल कर महाभारत-सागर में समा गयी हैं, इसीलिए वे सुरक्षित भी हो गयी हैं।

इस ग्रंथ में वर्णव्यवस्था का वर्णन है और उसको बड़ा मजबूत बताया गया है। जगह-जगह कहा गया है कि ब्राह्मण चाहे तो पूरे संसार को अपने शाप से भस्म कर सकता है; परंतु यह कहीं नहीं लिखा है कि ब्राह्मण चाहे तो पूरे संसार को आनंदपूर्ण कर सकता है। परंतु इसमें ऐसे भी प्रसंग हैं जिनमें ब्राह्मणवाद को जड़ से उखाड़कर शुद्ध मानवता का प्रतिपादन किया गया है। इसमें कारण-कार्य-व्यवस्था तथा विश्व के शाश्वत नियमों से हटकर चमत्कार की बातें, असंभव बातें, बिना सिर-पैर की बातें भी हैं। इसमें एक तरफ तो सांख्य दर्शन, प्रज्ञा दर्शन और विज्ञानवाद है और दूसरी तरफ विष्णु सहस्रनाम, शिवसहस्रनाम तथा श्रीकृष्ण महाराज के व्यक्तित्व में अनंत बह्मांड नायकत्व के आरोपण की भावुकता भी है। वेदों के ऋषि *'जीवेम शरदः शतम्'* या *'शरदः शतात्'* कहकर सौ वर्ष या सौ वर्ष से ऊपर जीने का सत्यपरक भाव रखते हैं, परंतु इस ग्रंथ में हजारों-लाखों वर्षों तक जीने वालों की कल्पना भी की गयी है। इसमें कर्म सिद्धांत का ठोस वर्णन है, परंतु यह भी लिखा है कि अमुक पूजा-पाठ से सारे पाप भस्म हो जाते हैं, जो एक धोखा है।

अतएव धरतीतल के सारे ग्रंथों को आदर देना चाहिए और यथाशक्ति उन्हें पढ़ना चाहिए, किंतु पारखी होकर। कोई भी ग्रंथ कितना ही मान्य, पुराना तथा प्रतिष्ठित हो, वह स्वतः प्रमाण नहीं हो सकता। भामतीकार वाचस्पति मिश्र ठीक ही कहते हैं-हजारों वेदवचन घड़े को कपड़ा नहीं बना सकते- *'न ह्यागमाः सहस्रमपि घटं पटयितुम् ईष्टे* (भामती)। जो युक्तियुक्त, विश्वनियमों तथा कारण-कार्य-व्यवस्था के अनुकूल है, वही बात मानने योग्य होगी। उसी से कल्याण होगा। संत, ऋषि, भगवान, अवतार, पीर, पैगंबर की दोहाई देकर कोई बात प्रमाण नहीं हो सकती। इस पर वेद, कबीर, तुलसी सब एकमत हैं-

सक्तुमिव तितउना पुनन्तो यत्र धीरा मनसा वाचमक्रत।
अत्रा सखायः सख्यानि जानते भद्रैषां लक्ष्मीर्निहिताधि वाचि

(ऋग्वेद , ,)

अर्थात जहां विवेकवान चलनी से सत्तू छान लेने के समान विवेक से वाणी को छान लेते हैं, वहां मित्र मित्रता को जानते हैं और कल्याणकारी लक्ष्मी निवास करती है।

साधू ऐसा चाहिए, जैसा सूप सुभाय।
सार-सार को गहि रहे, थोथा देय उड़ाय

(कबीर साहेब)

जड़-चेतन गुण-दोषमय, विश्व कीन्ह करतार।
संत हंस गुण गहहिं पय, परिहरि वारि विकार

(गोस्वामी तुलसी दास जी)

हर पर्व के प्रारंभ में आता है–"नारायण, नरों में उत्तम नर, देवी सरस्वती तथा व्यास को नमस्कार करके जय का पाठ करना चाहिए।" यथा–

नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम्।
देवीं सरस्वतीं व्यासं ततो जयमुदीरयेत्

नर, नारायण, देवी सरस्वती और व्यास का नमस्कार करके ततो–ततः=इसके बाद जयम्–उदीरयेत्=जय का उदीरण करे, बोले, पाठ करे। पूना–संस्करण में व्यास की जगह पर 'चैव' का प्रयोग आता है, व्यास नाम हटा दिया जाता है; क्योंकि जब व्यास महाभारत के रचयिता हैं तो वे अपनी लेखनी से अपना नाम नमस्कार के स्थान पर कैसे रखेंगे?

विद्वान मानते हैं कि पहले इस काव्य का नाम 'जय' था। इसीलिए उक्त श्लोक में जय का पाठ करना बताया गया है। पीछे इसका नाम 'भारत' हुआ, और अंत में इसे 'महाभारत' कहा गया।

आदि पर्व के प्रथम अध्याय में आता है, व्यासजी कहते हैं "इस ग्रंथ में आठ हजार आठ सौ श्लोक ऐसे हैं जिनका अर्थ मैं समझता हूं, शुकदेव समझते हैं; संजय समझते हैं या नहीं, संदेह है।"

इसी रचना को विद्वान लोग 'जय' कहते हैं। आगे कहा गया–"व्यासजी ने उपाख्यानों अर्थात अतिरिक्त कथाओं को छोड़कर चौबीस हजार श्लोकों में भारत संहिता की रचना की, जिसे विद्वान जन 'भारत' कहते हैं।" इसी अध्याय में कहा गया है–"संसार के पुण्य कर्म करने वाले मनुष्यों के उपाख्यानों के सहित एक लाख श्लोकों के इस उत्तम ग्रंथ को आदि भारत (महाभारत) जानना चाहिए।"

यह भी लिखा गया–"वेदव्यास ने साठ लाख श्लोकों की संहिता बनायी। उसमें से तीस लाख श्लोक देवलोक में पढ़ा गया, पंद्रह लाख पितृलोक में तथा चौदह लाख गंधर्वलोक में पढ़ा गया और एक लाख का महाभारत इस मनुष्य–लोक में पढ़ा गया। देवलोक में नारद ने इसे पढ़ाया, पितृलोक में असित देवल ने, गंधर्वलोक में शुकदेव ने गंधर्वों, यक्षों तथा राक्षसों को पढ़ाया और मृत्युलोक

. **अष्टौ श्लोकसहस्राणि अष्टौ श्लोकशतानि च।**
अहं वेद्मि शुको वेत्ति संजयो वेत्ति वा न वा

. **चतुर्विंशतिसाहस्रीं चक्रे भारतसंहिताम्।**
उपाख्यानैर्विना तावद् भारतं प्रोच्यते बुधैः –

. **इदं शतसहस्रं तु लोकानां पुण्यकर्मणाम्।**
उपाख्यानैः सह ज्ञेयमाद्यं भारतमुत्तमम् –

में वैशंपायन ने मनुष्यों को पढ़ाया।"

उक्त बातें महिमा में लिखी गयीं घोर काल्पनिक हैं। देवलोक, पितृलोक तथा गंधर्वलोक काल्पनिक हैं और उनमें तीस, पंद्रह तथा चौदह लाख श्लोकों की संहिता पढ़ना-पढ़ाना भी काल्पनिक है। हम लोगों के बीच एक लाख श्लोकों का महाभारत है, वह पढ़ा-पढ़ाया जा रहा है, यह सच्चाई है। कृष्ण द्वैपायन द्वारा महाभारत की रचना होने से इसका नाम कार्ष्णम् वेदम् कार्ष्ण वेद है। महाभारत पांचवां वेद कहा जाता है।

आगे यह भी लिखा गया–"यहां मुनि कृष्ण द्वैपायन नित्य प्रातः काल उठकर लिखते थे। उन्होंने तीन वर्षों में इस अद्‌भुत ग्रंथ महाभारत की रचना करके पूर्ण किया। हे भरतश्रेष्ठ! इस ग्रंथ में अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष की जो बाते हैं, वही अन्यत्र अन्य ग्रंथों में भी हैं और जो इसमें नहीं है, वह कहीं नहीं है।"

विद्वानों के यह भी विचार हैं कि वेदव्यास की रचना आठ हजार आठ सौ ( ) श्लोक हैं। पीछे उनके शिष्य वैशंपायन ने उसे चौबीस हजार श्लोकों में किया; और इसके बाद सूत कुलोत्पन्न लोमहर्षण के पुत्र उग्रश्रवा सौति ने इसे एक लाख श्लोकों तक पहुंचा दिया।

हिंदू धर्मकोश में डॉ. राजबली पांडेय लिखते हैं–"आधुनिक आलोचक इस महाग्रंथ को वेदव्यास और उनके शिष्य-प्रशिष्यों की रचना नहीं मानकर बाद में अनेक संशोधक-संपादक पौराणिक विद्वानों का संकलन या संग्रह कहते हैं। उनके विचार में भारत नामक महाकाव्य मूलतः वीरगाथा के रूप में था। कालांतर में जन साधारण के धर्मज्ञान का प्रमाण होने तथा विविध हिंदू संप्रदायों के उत्थान का वर्णन उपस्थित करने के कारण उसकी महत्ता बढ़ गयी। विद्वान इस महाकाव्य के मिश्रण या परिवर्धनात्मक तीन कालों पर एकमत हैं–

. **महाभारत, आदि पर्व, अध्याय , श्लोक - ।**
स्वर्गारोहण पर्व, अध्याय , श्लोक - ।

. **स्वर्गारोहण पर्व, अध्याय , श्लोक ।**

. **त्रिभिर्वर्षैः सदोत्थायी कृष्णद्वैपायनो मुनिः।**
महाभारतमाख्यानं कृतवानिद्‌मदभुतम्
धर्मे चार्थे च कामे च मोक्षे च भरतर्षभ।
यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत्क्वचित्
(महाभारत, आदि पर्व, अध्याय , श्लोक -)

(क) महाभारत महाकाव्य की साधारण काव्यमय रचना : दसवीं से पांचवीं अथवा चौथी शताब्दी ईसा पूर्व के बीच।

(ख) इस महाकाव्य का वैष्णव आचार्यों द्वारा सांप्रदायिक काव्य में परिवर्तन : दूसरी शताब्दी ईसा पूर्व।

(ग) महाभारत का वैष्णव ईश्वरवाद, धर्म, दर्शन, राजनीति, विधि का विश्वकोश बन जाना : ईसा की पहली तथा दूसरी शताब्दी।

"महाभारत के समाज में जातिवाद का पूर्ण अभाव है। स्त्रियों को पर्याप्त स्वाधीनता है। साधारण नियम के विपरीत ब्राह्मण योद्धा का काम करते हैं। हिंदू अभी शाकाहारी नहीं हुए थे। द्रौपदी का बहुपतित्व ऐतिहासिक तथ्य है, जो कहानी में बना रहा, यद्यपि स्वाभाविक रूप से यह आगे चलकर अग्रहणीय समझा जाने लगा। इस काल (प्रथम अवस्था) की एक समस्या कृष्ण का देव रूप में उत्थान है जिनका एक विरुद वासुदेव है। कुछ विद्वानों का विश्वास है कि आदि (प्रथम) भारत में कृष्ण केवल एक मानव थे तथा परवर्ती काल में ही उन्हें दैवी रूप मिला। दूसरों का मत है कि महाभारत में कृष्ण सदा देवता रहे हैं।"

हिंदी विश्वकोश के लेखक लिखते हैं–"इन सब बातों का निचोड़ यह है कि ईसवी सन के पहले से तक के समय में वर्तमान महाभारत का निर्माण हुआ है। इसी से मिलता-जुलता मत लोकमान्य तिलक का है कि यह बात निस्संदेह प्रतीत होती है कि वर्तमान महाभारत शक के लगभग पांच सौ वर्ष पहले अस्तित्व में जरूर था। स्पष्ट है कि यह विषय और शोध की अपेक्षा रखता है।"

डॉ. विष्णु सुकथनकर आदि पर्व की भूमिका में लिखते हैं–"महाभारत के अनेक संस्करणों में अलग-अलग श्लोक-संख्या हैं। उत्तर भारत के संस्करण और दक्षिण भारत के संस्करण में तो भेद है ही; उत्तर भारत के ही दो भिन्न प्रेस संस्करण–बंबई और कलकत्ता संस्करण में भिन्न श्लोक संख्या हैं। इस भिन्नता को दरकिनार कर एक मानद संस्करण तैयार किया जाना चाहिए। इस पर जर्मन विद्वान प्रोफेसर विंटरनित्ज का बड़ा आग्रह था। जब भी संस्कृत के विद्वानों का कोई भी अंताराष्ट्रीय सम्मेलन होता, तो वे अपनी बात रखने से पीछे न हटते थे। उन्हीं के निरंतर के दबाव से इस दिशा में कुछ कार्य शुरू हुआ। सर्वप्रथम

. **हिंदू धर्म कोश, पृष्ठ , उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान, लखनऊ।**

. **हिंदी विश्वकोश, खंड , ; काशी नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी।**

ई. में एक कमेटी इस काम के लिए नियुक्त हुई, किंतु कुछ खास काम न हो सका। ई. में प्रोफेसर विंटरनित्ज ने दुखी होकर कहा "अठारह पृष्ठ का पर्चा तैयार करने के अलावा महाभारत संबंधी और कोई काम इतने वर्षों में नहीं हो पाया।" विश्वयुद्ध के चलते यह काम रुक गया। इसके बाद भारत में ही जब 'भंडारकर शोध संस्थान' की पूना में स्थापना हुई तब उसके जिम्मे यह काम आन पड़ा।"

डॉ. विष्णु सुकथनकर ने महाभारत का प्रामाणिक पाठ तैयार किया। पूना के प्रतिष्ठित संस्थान 'भंडारकर ओरियंटल शोध संस्थान' ने संपूर्ण महाभारत का प्रामाणिक पाठ तैयार करने की खास जिम्मेदारी इन्हीं को सौंपी थी। डॉ. सुकथनकर ने इस महत्त्वपूर्ण कार्य को पूर्ण किया।

पीछे सन् ई. में बंबई विश्वविद्यालय के तत्त्वावधान में डॉ. सुकथनकर के महाभारत पर चार लेक्चर होने तय थे। तीन लेक्चर वे दे पाये। चौथे लेक्चर की निर्धारित तिथि को प्रातःकाल उनका शरीर छूट गया। जो लोग विश्वविद्यालय में उन्हें सुनने के लिए उपस्थित हुए, वे सब सायंकाल उनकी शोक-सभा में सम्मिलित होने के लिए उनके घर पहुंचे। पीछे वे चारों लेक्चर पुस्तक रूप में प्रकाशित हुए। पुस्तक का नाम है 'आन दि मीनिंग ऑफ दि महाभारत।'

डॉ. सुकथनकर ने प्रथम लेक्चर 'महाभारत तथा इसके आलोचक' में उन विदेशी विद्वानों की महत्त्वपूर्ण भूमिका को रेखांकित किया है जिन्होंने महाभारत की मूल कथा को ढूंढ़ने का प्रयास किया है। वे हैं ओल्डेनवर्ग, हॉपकिंस, विंटरनित्ज, लुडविग, लासेन, ब्यूहलर आदि।

ब्यूहलर का मत है कि ईस्वी की पांचवीं शती तक महाभारत एक लाख श्लोकों का ग्रंथ था और व्यास की रचना के रूप में प्रतिष्ठित था। तब से अब तक यह उसी रूप में चला आ रहा है।

फ्रैंज बॉप ने ई. में लिखा था कि इस महाकाव्य के सभी अंश एक ही समय में नहीं लिखे गये।

ओल्डेनवर्ग लिखते हैं, इस काव्य में मुख्य कथा के साथ ही लघु कथाओं का विकट वन है; साथ ही धर्मशास्त्र, दर्शन, प्राकृतिक विज्ञान, विधि, राजनीति और जीवन के व्यावहारिक-सैद्धांतिक पक्षों को उजागर करते हुए अगणित

. आदि पर्व की भूमिका, पृष्ठ , भंडारकर ओरियंटल रिसर्च इंस्टीट्यूट, पूना ई.।

उपदेश भरे हैं। यह गहन-चिंतन और प्रौढ़ विचारों से ओतप्रोत, काव्य की तमाम बारीकियों से गुंफित है। साधारण शिक्षा का खूब दोहराव है, भिन्न विचारों का उद्‌घाटन है, एक दूसरे से परस्पर होड़ करते भिन्न वृत्तियों के लोग, कभी न खत्म होने वाले युद्धों की भीषण बाण-वर्षा, मृत्यु को हेय समझने वाले वीरों का घोर संग्राम, अत्यंत उच्च आदर्श के महापुरुष, अत्यंत कमनीय स्त्रियां, क्रोधी तपस्वी मुनि, अद्‌भुत व्यक्तित्व के धनी पात्र, चमत्कारिक घटनाओं से भरपूर संसार के लोगों का चाल-चलन दिखाने वाला झरोखा सदृश है महाभारत ग्रंथ।

रमेशचंद्र दत्त सन् ई. में लिखते हैं, यह महाकाव्य जनमानस में इतना लोकप्रिय हुआ कि समय बढ़ने के साथ ही इसका विस्तार भी होता गया। हर बार लेखकों की नयी पीढ़ी इसमें कुछ न कुछ जोड़ती गयी। उत्तरी भारत के भिन्न प्रांतों में इसके प्रक्षेप तैयार होते रहे। हर नये संप्रदाय के प्रचारक इस पुराने महाकाव्य से अपने मतलब की सामग्री खोज लेते हैं। भिन्न वर्ण-जाति के नियम और अलग-अलग आश्रम व्यवस्था के भी सूत्र इसमें हैं। विधि और नैतिक नियमों का भी इसमें समावेश है, जिनके प्रति जनमानस में निष्ठा है। तमाम कहानियां, परंपराएं, मिथकों को इस ग्रंथ ने अपने में समाकर उन्हें सुरक्षित रखा है। इस प्रकार इसके संपादन के लगभग एक हजार वर्ष बाद तक यह बढ़ता ही गया। महाभारत एशिया की महानतम कृति है।

डॉ. सुकथनकर लिखते हैं, महाभारत के भिन्न संस्करणों में कुल जमा दो लाख पंक्तियां हैं। प्राचीन ग्रीक महाकाव्य इलियड (Iliad) और ओडिसी (Odyssey) दोनों को मिला दें, तो भी महाभारत उन दोनों का आठ गुणा होता है, और बाइबिल से चार गुणा बड़ा। विदेशी विद्वान सर चार्ल्स इलियट लिखते हैं–महाभारत इलियड से महान ग्रंथ है।

आधुनिक विद्वानों का खास मत है कि महाभारत किसी एक व्यक्ति द्वारा रचित नहीं है। कृष्ण द्वैपायन की चर्चा अवश्य है कि वे महाभारत के रचयिता हैं, परंतु यह विश्वसनीय नहीं लगता। अतएव यह महाकाव्य एक संकलन है जिसे भिन्न योग्यता के लोगों ने भिन्न काल में लिखा है। उनमें से कुछ निश्चय ही योग्य थे जिन्होंने मूल काव्य में नयी बातें जोड़कर उसमें वृद्धि की; किंतु अधिकतम तो साधारण बातें ही जोड़ी गयीं, जिससे मूल कथा अवरुद्ध हुई और उसका चेहरा ढक गया।

महाभारत के महत्त्व की चर्चा करते हुए सुकथनकरजी लिखते हैं कि बाणभट्ट के समय में इसकी सामग्री शिक्षा के रूप में प्रयोग की जाती थी। वैसे

ही जैसे यूनान में 'इलियड' पढ़ायी जाती थी। कवि तथा नाटककारों को यह हर युग में घटनाओं एवं नये विचारों के लिए प्रेरित करता रहा है। पुराने समय से ही यह अनेक दार्शनिक चिंतक–आचार्य शंकर, कुमारिल, संत ज्ञानदेव, रामदास तथा सम्राट अकबर, शिवाजी आदि को आकर्षित करता रहा है। यह भरतवंशियों की गाथा दूर बृहत्तर भारत तक फैली और न केवल बर्मा, स्याम (थाईलैण्ड) अपितु उसके आगे जावा तथा बाली द्वीपों तक भी इसका प्रचार हुआ। इस ग्रंथ की अनेक अमरकथाएं वहां के मंदिरों की दीवारों पर चित्रित की गयीं, इनकी मूर्तियां बनायी गयीं।

ध्यान देने योग्य है कि महाभारत और रामायण आज भी भारतीय जनमानस के दिल की धड़कन बने हुए हैं, न केवल विद्वानों–शिक्षितों के बीच, अपितु गांव–देहात के अनपढ़, चाहे वे लकड़ी का काम करने वाले हों या फिर कहारों आदि के बीच, यह खासा लोकप्रिय है। विदेशी विद्वानों के कथनानुसार ये प्रसिद्ध प्राचीन कहानियां जीवन के रस और संगीत से ओत–प्रोत हैं। ये सदानीरा जलस्रोत हैं। कितना भी पीयो, प्यास नहीं बुझती। ये महायुद्ध की गाथाएं आज भी महलों और झोपड़ियों में दर्शकों को एक–सा मुग्ध करती हैं।

सांख्य एवं प्रज्ञा दर्शन

महाभारत में ईश्वरवाद है, ब्रह्मवाद है, अवतारवाद है; किंतु सांख्य–चिंतन का उदात्त रूप भी है। राजा जनक के राजदरबार में धर्म के सौ आचार्य विद्यमान थे। वे जनक को उपदेश देते थे, किंतु उन्हें संतोष नहीं होता था। जब सांख्यवादी कपिल मुनि की परंपरा के आचार्य पंचशिख उनके यहां पधारे तब जनक सौवों आचार्यों को छोड़कर उनके चरणों में लिपट गये। अतएव पंचशिख ने जनक को योग्य अधिकारी मानकर उन्हें परम मोक्ष का उपदेश दिया जिसका सांख्यशास्त्र में वर्णन है– *"अब्रवीत् परमं मोक्षं यत् तत् सांख्येऽभिधीयते* (शांति पर्व ,)।"

पंचशिख ने जातिनिर्वेद, कर्मनिर्वेद तथा सर्वनिर्वेद की बात बतायी। जन्म लेना दुख है, कर्म–बंधनों में फंसना दुख है; अतएव इनसे वैराग्य होना जातिनिर्वेद और कर्मनिर्वेद है; फिर तो पिंड से ब्रह्मांड तक के भोगों की क्षणभंगुरता और दुखरूपता विचार कर सब ओर से पूर्ण विरक्त हो जाना

. **On The Meaning Of The Mahabharata by Dr. Vishnu Sukthankar, Published by Asiatic Society of Bombay, Second edition 1998.**

सर्वनिर्वेद है। उन्होंने कहा, मोक्ष-इच्छुक अहंता-ममता तथा आसक्ति-कामना का त्याग करे। इनके त्याग बिना जो लोग विनीत भाव का ढोंग करते हैं वे अविद्या में पड़े रहते हैं।

जड़ प्रकृति से अपने शुद्ध चेतन स्वरूप को सर्वथा भिन्न समझकर जिस समय साधक न सुनता है, न सूंघता है, न स्वाद लेता है, न देखता है, न स्पर्श करता है और न संकल्प-विकल्प करता है, अपितु सर्व-अभिमान-शून्य होकर शांत हो जाता है, वह अपने शुद्ध स्वरूप को प्राप्त एवं योगयुक्त होता है। पुरुष (चेतन) क्षेत्र (प्रकृति) को जानता है इसलिए उसे क्षेत्रज्ञ कहा जाता है। प्राकृतिक शरीर में अंतर्यामी रूप में शयन करने से उसे पुरुष कहा जाता है। क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ भिन्न-भिन्न हैं। क्षेत्र जड़ है और क्षेत्रज्ञ उसका ज्ञाता पचीसवां तत्त्व है। वह पचीसवां तत्त्व चेतन पुरुष न ईश्वर है और न जड़ तत्त्व है '*अनीश्वरमतत्त्वं च तत्त्वं तत् पंचविंशकम्*' (शांति पर्व ,)। इतना ही सांख्य दर्शन है। सांख्य के विद्वान तत्त्वों की संख्या एवं गणना करते हैं और प्रकृति को ही जगत का कारण बताते हैं। इसलिए इस दर्शन का नाम सांख्य है। सांख्यवेत्ता प्रकृति के चौबीस तत्त्व कहते हैं और इनसे परे पचीसवां तत्त्व चेतन पुरुष कहते हैं। वह पचीसवां जड़ प्रकृति से सर्वथा परे है। जब चेतन पुरुष अपने को जड़ प्रकृति से सर्वथा भिन्न जान लेता है, तब उस समय वह 'केवल' हो जाता है– *'बुध्यते आत्मानम् तदा भवति केवलः।'* सांख्य दर्शन सम्यक दर्शन है। जो इसे समझ लेता है वह जड़ प्रकृति का मोह छोड़कर शांत हो जाता है। प्रकृति-पुरुष का विवेक ही सम्यक दर्शन है। गुणमय तत्त्व से भिन्न आत्मा त्रिगुण से परे है। सांख्य दर्शन का बोध हो जाने पर चेतन पुरुष पुनः संसार में नहीं लौटता। वह परम आत्मतत्त्व में स्थित हो जाता है। प्रकृति को 'सर्व' कहते हैं। उससे सर्वथा भिन्न चेतन पुरुष को 'असर्व' कहते हैं। जो इसे ठीक से जानता है, वह आवागमन से पार हो जाता है (शांति पर्व, , -)।

वसिष्ठजी कहते हैं, सृष्टि-प्रलय चौबीस तत्त्व वाली जड़ प्रकृति में है। इससे परे पचीसवां तत्त्व चेतन पुरुष है जो सृष्टि-प्रलय से रहित है (,)।

अव्यक्त प्रकृति, महतत्त्व, अहंकार, आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी ये आठ; पांच ज्ञानेंद्रियां, पांच कर्मेंद्रियां, पांच विषय और मन ये सोलह। ये ही चौबीस जड़ तत्त्व हैं। इनसे परे पचीसवां नाना चेतन पुरुष हैं (शांति पर्व)। प्रकृति जड़ है, पुरुष चेतन है; परंतु चेतन पुरुष को जब तक अपने स्वरूप का बोध नहीं होता है, तब तक वह जन्म-मरण में भटकता है।

चिंताशून्य ज्ञानी महात्मा पुरुष को 'केवल' मानते हैं, क्योंकि वह साक्षी और अकेला है। वह देहाभिमान के कारण दुखी होता है। सब प्राणियों पर दया करने वाले और केवल आत्मज्ञान में रमने वाले सांख्य विद्वान प्रकृति को एक जड़ समुच्चय तथा उससे भिन्न चेतन पुरुष को नाना मानते हैं। जैसे मूंज में से सींक निकाल ली जाती है, वैसे जड़ प्रकृति में से चेतन को विवेकवान विवेक से निकाल लेते हैं। यह विचारप्रधान उत्तम सांख्य दर्शन है। इस प्रकार सांख्य के ज्ञानी जानकर कैवल्य को प्राप्त हो गये हैं–*'एवं हि परिसंख्याय सांख्याः केवलतां गताः* (शांति पर्व, ,)।'

भीष्म कहते हैं–युधिष्ठिर! आत्मज्ञ सांख्य शास्त्र के वेत्ता का ज्ञान सुनो। इसे महान शक्तिशाली कपिल आदि यतियों ने प्रकाशित किया है। "हे नरश्रेष्ठ सांख्य दर्शन में किसी प्रकार की भूल नहीं दिखती। इसमें गुण तो बहुत हैं, किंतु दोषों का सर्वथा अभाव है। हे राजन! महात्मा पुरुषों में, वेदों में, सांख्यों (दर्शनों) में, योग शास्त्रों में और पुराणों में जो अनेक उत्तम ज्ञान देखा जाता है, वह सब सांख्य से ही आया है। बड़े-बड़े इतिहासों में, सत्पुरुषों द्वारा सेवित अर्थशास्त्रों में और इस संसार में जो कुछ महान ज्ञान देखा जाता है, वह सब सांख्य से ही आया हुआ है। सांख्य ज्ञान अत्यंत विशाल और बहुत पुराना है। यह समुद्र की तरह अगाध है, निर्मल, उदार भावों से भरा और अत्यंत सुंदर है। हे राजन! महात्मा एवं नारायण इस अद्वितीय संपूर्ण सांख्य ज्ञान को पूर्णरूप से धारण करते हैं।"

सांख्य, योग, प्रज्ञा तथा आन्वीक्षकी दर्शन की महाभारत में पर्याप्त सामग्री है। सांख्य के लिए तो इतना ही पर्याप्त है–हे महात्मन! इस संसार में जो कुछ भी ज्ञान है, सब सांख्य से आया है–*"ज्ञानं च लोके यदिहास्ति किंचित् सांख्यागतं तच्च महन्महात्मन्।"*

. **यस्मिन् न विभ्रमाः केचिद् दृश्यन्ते मनुजर्षभ।**
गुणाश्च यस्मिन् बहवो दोषहानिश्च केवला
ज्ञानं महद् यद्धि महत्सु राजन् वेदेषु सांख्येषु तथैव योगे।
यच्चापि दृष्टं विविधं पुराणे सांख्यागतं तन्निखिलं नरेंद्र
यच्चेतिहासेषु महत्सु दृष्टं यच्चार्थशास्त्रे नृप शिष्टजुष्टे।
ज्ञानं च लोके यदिहास्ति किंचित् सांख्यागतं तच्च महन्महात्मन्
सांख्यं विशालं परमं पुराणं महाणर्वं विमलमुदारकांतम्।
कृत्स्नं च सांख्यं नृपते महात्मा नारायणो धारयतेऽप्रमेयम्

(शांति पर्व, अध्याय)

भृगुवंशियों का प्रभाव

भृगुवंशियों द्वारा महाभारत में अपनी परंपरा की बातें काफी जोड़ी गयी हैं। वासुदेवशरण अग्रवाल ने जो इस विषय में लिखा है उसे ही प्रस्तुत कर देना काफी है। वे लिखते हैं–

"महाभारत में भार्गव सामग्री का अत्यधिक समावेश है। भृगुओं की कितनी कथाएं कई बार महाभारत के उपाख्यानात्मक भाग में सम्मिलित की गयी हैं। वैदिक साहित्य में भी भार्गवों का जो गौरव अविदित था, वह पहली बार महाभारत में पाया जाता है। भारत-वंश की सीधी-सादी युद्ध कथा में भार्गव-वंश की कथा कैसे मिल गयी? अपने आप ऐसा हो गया हो, सो बात नहीं। भार्गव-कथाओं के मेल से मूल भारत ग्रंथ को महाभारत का रूप दिया गया। पुरानी कथाओं को भार्गव-रंग में रंजित किया गया। यह कार्य संभवतः व्यास का नहीं था। उनकी चतुर्विंशति साहस्त्री (चौबीस हजार श्लोकों की) संहिता का नाम भारत था। वैशंपायन ने यह परिवर्द्धन किया हो, यह संभावना भी कम है। अकेले उग्रश्रवा सूत ने एक ही बार में यह परिष्कार कर दिया हो, यह भी संभव नहीं है। वास्तविक बात यह है कि महाभारत का एक महत्त्वपूर्ण संस्करण भार्गवों के प्रबल और साक्षात प्रभाव के अंतर्गत तैयार किया गया। यह कार्य कई शताब्दियों में संपन्न हुआ होगा। महाभारत काव्य था। उसका पाठ भी तरल अवस्था में था। किसी गाढ़े समय में सूतों द्वारा मूल भारत काव्य भार्गवों के प्रभाव में आया और महाभारत रूप में परिवर्द्धित होकर प्रतिसंस्कृत हुआ। भारतवंश युद्ध कहानी के स्थान में महाभारत नये रूप में धर्म संहिता बन गया। शांति और अनुशासन पर्वों के जो नीति और धर्मपरक अंश हैं, वे इसी भार्गव-प्रभाव के फल हैं। कुलपति शौनक स्वयं भार्गव थे।"

इसीलिए महाभारत के आदि पर्व के पांचवें अध्याय के आरंभ में ही शौनकजी उग्रश्रवा सूत से कहते हैं–तात लोमहर्षण-पुत्र! पहले आपके पिता ने सभी पुराणों का अध्ययन किया था। क्या आपने भी उनका अध्ययन किया है? पुराणों में दिव्य कथाएं वर्णित हैं। आपके पिता से मैंने पहले राजर्षियों तथा ब्रह्मर्षियों की वंश-कथाएं सुनी हैं। 'आज तो मैं पहले भृगुवंश का वर्णन सुनना चाहता हूं–*तत्र वंशमहं पूर्वं श्रोतुमिच्छामि भार्गवम्* (आदि पर्व, ,)।'

. **भारत सावित्री, पृष्ठ - ।**

जब अभी महाभारत का आरंभ हो रहा है, तब भरतवंशियों की ही कथा चलना चाहिए, परंतु भार्गववंशी वैशंपायन उग्रश्रवा सूत से भार्गव वंश की ही कथा कहलाना चाहते हैं। यह तो उपोद्घात है, वस्तुतः भार्गववंशियों ने अपनी वंश-परंपरा की कथाएं इसमें विस्तार से लिखीं।

अग्रवालजी लिखते हैं-"आदि पर्व में आज तक महाभारत के दो प्रारंभ पाये जाते हैं-अध्याय एक ( ) के श्लोक - में भारत का व्यास कृत मंगलाचरण और अध्याय चार ( ) के गद्यात्मक भाग एक-तीन (-) में महाभारत का भार्गव-प्रारंभ। सौभाग्य से ये दोनों स्थल परस्पर विरोधी होते हुए भी पास-पास रखकर सुरक्षित कर लिए गये। महाभारत के समस्त भार्गव उल्लेखों का एकत्र विचार करने से यह परिणाम अनिवार्य हो जाता है कि भारत-वंश के युद्ध की कहानी में भृगुवंशियों के वर्णन को बहुत अधिक स्थान दिया गया है। भारत-युद्ध के चित्रपट का पृष्ठदेश प्रायः भार्गव-उपाख्यानों से भर दिया गया। आदि पर्व में पौष्य उपाख्यान, आरण्यक (वन) पर्व में कार्त्तवीर्य उपाख्यान, उद्योग पर्व में अंबा उपाख्यान, शांति पर्व में विपलोपाख्यान और अश्वमेध पर्व में उत्तंक उपाख्यान भार्गवों के आख्यान हैं। आदि पर्व का सारा पौलोम पर्व और पौष्य पर्व का अधिकांश भाग भार्गव-उपाख्यानों से भरे हैं।

"इसके अतिरिक्त भृगुवंशी ऋषियों के कई लंबे संवाद इस ग्रंथ में हैं, जैसे भृगु-भरद्वाज-संवाद, च्यवन-कुशिक-संवाद और मार्कण्डेय समास्या (बैठक)। उत्तंक की कथा, च्यवन और इंद्र के संघर्ष की कथा, भार्गव राम (परशुराम) से द्रोण की अस्त्र-प्राप्ति की कथा और कर्ण के शिष्यत्व की कथा दो-दो बार आयी है। जमदग्नि और परशुराम की जन्म कथा चार बार आयी है। भार्गव राम (परशुराम) के द्वारा क्षत्रियों के इक्कीस बार नाश किये जाने का उल्लेख दस बार हुआ है और हर बार *'त्रिसप्तकृत्वः पृथिवी कुता निःक्षत्रिया पुरा'* यही उसका रूप है जिसे सूतों ने उसके विरुद्ध ज्ञान का अंतरा ही बना लिया था। भार्गव राम के द्वारा क्षत्रियों के गर्व तोड़ने का उल्लेख तो लगभग बीस बार हुआ है। भार्गवों का यह गौरव महाभारत में ही स्फुट हुआ है। उनके यश और वीर्य का आभास वैदिक साहित्य में प्रायः नहीं है। सौ बातों की एक बात यह कि कुलपति शौनक जिनको उग्रश्रवा सूत ने महाभारत की कथा सुनायी, स्वयं भार्गव थे। किंतु इस विषय में भी हमें विचारों का संतुलन रखने की आवश्यकता है। महाभारत संपूर्ण ब्राह्मण-परंपरा का विश्वकोश और भारतीय उपाख्यानों का सनातन कल्पवृक्ष बन गया था। स्वयं महाभारत में कहा गया

है– *यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत् क्वचित्* (आदि ,) (गीताप्रेस के अनुसार ,)।

"अतएव भरत वंश की सीधी-सादी युद्ध कथा को भारतीय धर्म के विश्वकोश में डालने का भगीरथ आयोजन महाभारत में है। फिर भी अगस्त्य, आत्रेय, कण्व, कश्यप, गौतम, वसिष्ठ आदि ऋषि कुलों के वर्णन को महाभारत में उतना स्थान नहीं मिला, जितना भृगुवंश को। महाभारत के कथाप्रवाह में वे कथाएं छिप-सी गयी हैं, पर 'भार्गवों के उपाख्यान सिर ऊंचा उठाये हुए बार-बार हमारे सामने आकर दर्शन देते हैं, तथा भार्गव महापुरुषों के जो देवतुल्य आकार कल्पित किये गये हैं, वे भीष्म, कर्ण, कृष्ण और अर्जुन जैसे अतिमानवों के साथ टक्कर लेते हैं और कहीं उनको भी पीछे छोड़ जाते हैं।'

"भार्गव सामग्री महाभारत के उस अंश में है जिसका निर्माण उपाख्यानों से हुआ है। अतएव यह असंदिग्ध परिणाम निकाला जा सकता है कि महाभारत के वर्तमान संस्करण में भारत कथाओं के साथ भार्गव-उपाख्यानों का जानबूझकर गठबंधन किया गया। महाभारत की अनुश्रुति के अनुसार ग्रंथ के संस्कर्ताओं ने सौभाग्य से इस बात को स्पष्ट स्वीकार किया है कि व्यास का मूल ग्रंथ भारत , (चौबीस हजार) श्लोकों का था और उसमें उपाख्यान नहीं थे (आदि ,) (गीताप्रेस संस्करण के अनुसार , -)। किंतु भार्गव शौनक के द्वादश वर्षीय यज्ञ में लोमहर्षण के पुत्र पौराणिक उग्रश्रवा सूत ने जिस ग्रंथ का पारायण किया उसमें घटनास्थल अशांत कौरव राजसभा से हटकर भार्गवों के प्रशांत आश्रम में स्थापित होता है।

"कथाभाग के अतिरिक्त महाभारत की नीति और धर्मसंबंधी सामग्री पर भी भार्गव-प्रभाव पड़ा। यह सर्वसम्मत है कि धर्म और नीति का जैसा सर्वांगपूर्ण और गंभीर विवेचन महाभारत में प्राप्त है, जिसके कारण हिंदू संस्कृति में इसे स्मृति का पद दिया गया और राष्ट्र की दृष्टि में शाश्वत सम्मान प्राप्त हुआ, वैसा अन्यत्र, कहीं नहीं है। धर्म और नीति विषय में भी भृगुओं का विशेष प्रभाव था। मनु द्वारा प्रणीत धर्मशास्त्र सुनाने का कार्य भृगु ने ही किया, जिसके कारण मनुस्मृति को आज भी भृगुसंहिता कहा जाता है। भार्गव शुक्र का नीति विषय से संबंध प्रसिद्ध ही है। डॉ. ब्यूहलर की गणना के अनुसार मनुस्मृति के (दो सौ साठ) श्लोक (समग्र ग्रंथ का लगभग दशमांश) महाभारत के तीसरे, बारहवें और तेरहवें पर्वों में पाये जाते हैं।"

भारत सावित्री, पृष्ठ - ।

वैष्णव भागवतों का प्रभाव

यदुवंश में अंशु नाम के महापुरुष थे। उनके पुत्र सत्वत थे और सत्वत के पुत्र सात्वत थे जिन्होंने वैष्णवों का भागवत संप्रदाय चलाया। इनमें विष्णु नारायण की उपासना चली। इसी परंपरा में श्रीकृष्ण एक महान तेजस्वी पुरुष हुए जिनको ऋग्वेद (, , -) में दस हजार वन्यजातियों का नायक, इंद्र का विरोधी और अत्यंत तेजवान कहा गया है, तथा छांदोग्य उपनिषद् (, ,) में देवकी-पुत्र, घोर आंगिरस का शिष्य तथा कर्मकांड से रहित आत्मज्ञान का जिज्ञासु कहा गया है। वही श्रीकृष्ण आगे चलकर यादवों में स्वयं विष्णु नारायण का रूप ले लेता है। विष्णु नारायण स्वयं सगुण भगवान हैं। वे ही श्रीकृष्ण रूप में अवतरित हुए, फिर विष्णु नारायण तिरोहित हो गये। वासुदेव कृष्ण सर्वोच्च निर्गुण-सगुण परमात्मा मान लिए गये। यह वासुदेव कृष्ण-भक्ति ईसा के पहले प्रतिष्ठित हो गयी थी। इस परंपरा को 'पांचरात्र मत' कहते हैं। इस मत के अनुसार सारी सृष्टि के कारण पांच हैं–पुरुष, प्रकृति, स्वभाव, कर्म और दैव (प्रारब्ध)। गीता (,) में अधिष्ठान, कर्ता, करण, चेष्टाएं और दैव कहा गया है। फिर कृष्णभक्ति जोर से चल पड़ी। उक्त पांचरात्र भागवत संप्रदाय में मानवमात्र के लिए स्थान था। यज्ञ को भी लिया गया, किंतु हिंसारहित अन्न, मेवे, घृत आदि से उसका अनुष्ठान होता था। ये बातें महाभारत में अनेक जगह देखने को मिलती हैं। पांचरात्र भागवतों का प्रभाव महाभारत में व्याप्त है।

वासुदेवशरण अग्रवाल लिखते हैं–"महाभारत की पाठ-परंपरा में इसके कई संस्करण संभावित ज्ञात होते हैं। उनमें से एक शुंगकाल में और दूसरा गुप्तकाल में संपन्न हुआ जान पड़ता है। इनमें से पिछले संस्करण में पांचरात्र भागवतों ने बहुत-सी नयी सामग्री अपने अभिनव दृष्टिकोण के अनुसार यथास्थान सन्निविष्ट कर दी थी।"

जिस कथा के अंत में फलश्रुति है, वह प्रक्षेप है। जिसमें यह बात आती है कि मैं इसे विस्तार से सुनना चाहता हूं, तो उत्तर में आता है कि मैं तुम्हें इसे विस्तार से सुनाता हूं, वहां प्रक्षेप है। किंतु प्रक्षेप के कारण यह बुरा नहीं है। शताब्दियों तक नयी-नयी कथाएं जुड़ते-जुड़ते यह ग्रंथ विविध प्रकार के मतों, संप्रदायों तथा ज्ञानोपदेशों का सागर हो गया है। इसमें रामभक्ति का अभाव-सा है, कृष्णभक्ति जोर पर है; फिर विष्णु तथा शिव के सहस्रनाम में उनके प्रति भक्ति भावना प्रकट की गयी है। श्रीकृष्ण का वैदिक और औपनिषदिक रूप तो

. **भारत सावित्री, पृष्ठ ।**

कहीं छाया मात्र है, उनका सर्वहर्ता, कर्ता तथा उद्धारकर्ता पौराणिक रूप अधिक उभरकर आया है। उनका यादववंशी महामानव रूप तो पूरे ग्रंथ में व्याप्त है।

श्वेतद्वीप के श्वेत वस्त्रधारी इंद्रियजित साधक हरिमेधस की उपासना करते हैं। इसका जो उदात्त वर्णन है, पढ़ने योग्य है। वासुदेवशरण अग्रवाल ने इसकी पहली परख की है कि यह पारसियों द्वारा अहुरमजदा की उपासना है। यही अहुरमजदा महाभारत में हरिमेधस बन गया और आगे मेधस उड़कर हरि रह गया और वैष्णवों में हरि नाम जप चालू हो गया।

रामायण और महाभारत में अवतारवाद, चमत्कार, अतिशयोक्तियां और असंभव कथन का वर्णन देखकर कितने विचारक यह सोचते हैं कि यह सब केवल मिथक, कल्पित कहानी एवं उपन्यास मात्र है। न इनके पात्र कभी हुए और न इनमें वर्णित घटनाएं कभी हुईं; परंतु ऐसी बातें नहीं हैं। पहले जमाने में धर्म, दर्शन, अध्यात्म, इतिहास, कहानियां, मिथक आदि सब एक साथ कहा व लिखा जाता था। इसीलिए आज वह मूलतः ही कल्पित लगता है।

महावीर, बुद्ध, शंकराचार्य, कबीर, नानक आदि महापुरुषों को हम कल्पित नहीं कह सकते। ये सब ऐतिहासिक महापुरुष हैं, परंतु इनके जीवन-वर्णन में भक्त-लेखकों ने ऐसे चमत्कार, अतिशयोक्तियां तथा असंभव कथन जोड़े हैं जो न उनमें हो सकते हैं न किसी के जीवन में हो सकते हैं; जैसे आकाश में उड़ना, मुरदे को जिला देना, बैल से वेदमंत्र बोलवा देना, दीवार-चौकी आदि को अपनी आज्ञा से चला देना, किसी लोक में उनका आना-जाना, थोड़ी वस्तु को बहुत अधिक कर देना, उनका सर्वशक्तिमान जगत-नियंता होना या उसका संदेशवाहक या अवतार होना आदि। परंतु, उक्त बातें तथा अन्य तरह की अतिशयोक्तियां भक्त-लेखकों ने उनमें तथा अन्य महापुरुषों में जोड़ रखी हैं। श्रद्धा ठीक है, किंतु श्रद्धातिरेक तो पागलपन ही है। किसी के जीवन में जुड़ी अलौकिकता और चमत्कार केवल कल्पित ही हैं।

अतएव रामायण तथा महाभारत के मुख्य पात्रों को हम कल्पित नहीं कह सकते और न उनमें वर्णित सब बातों को कल्पित कह सकते हैं। उनमें वर्णित अलौकिकता तथा चमत्कार कल्पित हैं। रही बात, कारण-कार्य की कसौटी से कसी बातें भी कितनी घटित हैं और कितनी कल्पित, इसका निर्णय करने का साधन भी आज हमारे पास नहीं है।

खास बात है, उनसे प्रेरणा लेकर अपने जीवन का सुधार करना। अपने पूर्वजों की गलतियों से हमें यह प्रेरणा लेना चाहिए कि यदि हम भी गलती करेंगे तो वैसे ही दुख पायेंगे जैसे हमारे पूर्वज दुख पाये, अतएव हम गलती न करें।

अपने पूर्वजों की अच्छाइयों से हम प्रेरणा लेकर अच्छे काम करें जिससे हमारे जीवन में सुख-शांति हो।

इस पुस्तक के विषय में

'वेद क्या कहते हैं?' प्रकाशित हो जाने के बाद अवधवासी वेदप्रकाश द्विवेदी मुझसे आग्रह करने लगे कि आप महाभारत पर लिख दें। मैंने उन्हें डांट दिया कि वृद्ध शरीर से इतनी मेहनत न लो। वे मंद स्वर में समय-समय से कहते रहे और मैं उनकी उपेक्षा करता रहा। प्रीतमनगर कालोनी के अपने मित्र शिवप्रसाद मिश्र, वैदिक भाषा में कहें तो वे परोक्ष प्रिय हैं। वे मुझसे सीधे न कहकर मेरे साथियों से संकेत में कहते रहे।

सन् ई. के शीतकाल में इलाहाबाद विश्वविद्यालय तथा जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, दिल्ली के प्रोफेसर सूर्यनारायणजी तथा डॉ. रामचंद्रजी मिलने आये। सूर्यनारायणजी ने कहा–आप महाभारत पर लिख दें, चाहे थोड़े में लिखें। मैंने कहा–थोड़े में लिखकर महाभारत को ठीक से नहीं बताया जा सकता। उन्होंने कहा–आप लिख देंगे तो निर्णय हो जायगा। रामचंद्रजी ने भी इस प्रस्ताव पर बल दिया। साथ के साधु सतेंद्रदासजी बड़े अदब से मुझे सुनाकर कहते ही रहते–"महाभारत पांचवां वेद है, धीरे-धीरे लिखिए।" इतने ही के नहीं, यह बहुतों के स्वर थे। फिर मेरा मन बनने लगा।

प्रोफेसर सूर्यनारायणजी और साथ के ब्रह्मचारी देवेंद्रजी इलाहाबाद विश्वविद्यालय से महाभारत के संबंध में इंगलिश में सामग्री लाये। देवेंद्र ने कुछ अंश का हिंदी अनुवाद भी किया जो भूमिका के लिए उपयोगी हुआ। मेरा मन बना। विगत वर्ष हरद्वार कुंभ मेले में रहते-रहते गीताप्रेस गोरखपुर की दुकान से महाभारत का नया संस्करण जो छह खंडों में है, मंगाकर पढ़ने लगा।

सन् ई. के वर्षाकाल में जब इलाहाबाद के कबीर नगर के कबीर आश्रम में वर्षावास के लिए बैठा, और महाभारत पर लिखने के लिए सोचा, तब यह काम इस बुढ़ापा में हिमालय पर चढ़ने जैसा लगा। किंतु जब लिखना शुरू किया और लिखता रहा तब लगा कि मानो जवानी लौट आयी है और लिखता गया। फलतः तीन महीने आश्रम में रहकर और पांच महीने भ्रमणशील कार्यक्रमों–छत्तीसगढ़, पोखरा, काठमांडो (नेपाल), गुजरात, राजस्थान, दिल्ली, कलकत्ता आदि में लिखता रहा। इस तरह आठ महीने में यह कार्य पूरा हो गया।

उपर्युक्त मित्रगण यदि जोर न दिये होते, तो यह काम मुझसे न होता। इस काम को करने से लगा कि परिश्रम करने से बल बढ़ता है, निष्क्रिय होने से बल

क्षीण होता है। कबीर-वाणी, वेद और वैदिक वाणी हमें अनासक्त होकर कर्मशील बने रहने के लिए ललकारती है–

कर्म करे औ रहे अकर्मी, ऐसी युक्ति बतावे।

(कबीर-वाणी)

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः।
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे

(शुक्ल यजुर्वेद, ,)

अर्थात कर्म करते हुए पूरा जीवन जीने की इच्छा करे। जीवन के लिए तुम्हारा कोई दूसरा रास्ता नहीं है। हां, मनुष्य कर्म में लिपायमान न हो।

चरन् वै मधु विन्दति चरन् स्वादुमुदुम्बरम्।
सूर्यस्य पश्य श्रेमाणं यो न तन्द्रयते चरंश्चरैवेति

(ऐतरेय ब्राह्मण, , ,)

अर्थात श्रमशील ही मधु पाता है, श्रमशील ही उदुंबर का मीठा फल पाता है। सूर्य की श्रेष्ठता को देखिए, वह कभी निद्रित नहीं होता, अपितु निरंतर प्रज्वलित रहकर संसार को प्रकाश और ऊर्जा देता रहता है। अतएव चलते रहो-चलते रहो–चरंश्चरैवेति।

गीताप्रेस गोरखपुर से प्रकाशित छः खंडों में महाभारत है। इसी का आधार लेकर यह काम किया गया है। भारतविद सम्माननीय वासुदेवशरण अग्रवाल की 'भारत सावित्री' पुस्तक से मुझे महाभारत के अनेक स्थलों के मर्म समझने में सहयोग मिला है; अतएव मैं इन सबका आभारी हूं। इस पुस्तक में भारत सावित्री से अनेक उद्धरण यथास्थान दिये गये हैं।

मैं अल्पज्ञ और अनाड़ी हूं, किंतु पूरी विश्वसत्ता की करुणा मेरे ऊपर बरसती है। जो कदाच मेरे आलोचक हैं, उनकी मेरे ऊपर अधिक करुणा है, क्योंकि वे मेरे में थोड़ी भी त्रुटि नहीं रहने देना चाहते हैं। मेरी टूटी-फूटी सामग्री को सभी वर्ग और संप्रदाय के लोग आदर देते हैं। इसके संबंध में उनके लिए मेरे पास आभार के शब्द नहीं हैं। इस कृति में आयी हुई त्रुटि पर विज्ञजनों का संकेत पाने पर उसका सुधार किया जा सकता है।

कबीर आश्रम, कबीर नगर, इलाहाबाद — विनम्र
कबीर जयंती, ज्येष्ठ पूर्णिमा वि० — **अभिलाष दास**
जून

विषय-सूची

पहला : आदि पर्व

. कथा आरंभ ४१
. ऋषियों की जिज्ञासा और उत्तर ४२
. धृतराष्ट्र के मनोभाव का चित्रण ४४
. धृतराष्ट्र का विलाप, संजय का सांत्वना देना ५०
. समंत पंचक, अक्षौहिणी सेना और ग्रंथ की विषय सूची ५१
. जनमेजय, सरमा और सोमश्रवा ५२
. आरुणि उद्दालक, उपमन्यु तथा वेद की गुरु-भक्ति ५४
. वेद की उदारता, उत्तंग की गुरु-भक्ति ५८
. च्यवन नाम क्यों पड़ा? ६३
. नागवंशियों का गाथात्मक रूप ६५
. राजा उपरिचर वसु ७१
. सत्यवती से वेदव्यास की उत्पत्ति ७३
. मुख्य पात्रों की संक्षिप्त उत्पत्ति-कथा ७४
. ब्राह्मणों से क्षत्रियों की उत्पत्ति ७४
. राजा दुष्यंत और शकुंतला ७५
. भरत-जन्म, दुष्यंत-शकुंतला संवाद ७७
. ययाति की संक्षिप्त कथा ८०
. कच और देवयानी ८१
. देवयानी तथा शर्मिष्ठा का कलह ८३
. शुक्राचार्य का ययाति को बूढ़ा होने का शाप ८६
. ययाति का तप, स्वर्ग प्राप्ति, पतन और उपदेश ८८
. अष्टक-ययाति-संवाद और ययाति का दान अस्वीकार ९०
. पौरव-राज-वंशावली पौरव राजावली का प्रथम भाग—पुरु से अजमीढ़ तक ९२

–पौरव–राजावली का दूसरा भाग–अजमीढ़ से कुरु तक ९३
–पौरव–राजावली का तीसरा भाग–कुरु से पांडवों तक ९५
. शांतनु और गंगा ९६
. राजा शांतनु का निषाद–कन्या पर मोह और देवव्रत की प्रतिज्ञा ९९
. सत्यवती से चित्रांगद और विचित्रवीर्य की उत्पत्ति और गद्दी १००
. विचित्रवीर्य का विवाह और निधन १०१
. सत्यवती का आग्रह, भीष्म की अस्वीकृति और वेदव्यास से गर्भाधान १०२
. शापित धर्मराज विदुर? १०४
. पांडु की राजगद्दी और धृतराष्ट्र का विवाह १०६
. कुंती से कर्ण की उत्पत्ति १०७
. पांडु का कुंती तथा माद्री के साथ विवाह १०९
. राजा पांडु की दिग्विजय ११०
. विदुर का विवाह और उनके तथा धृतराष्ट्र के पुत्रों का जन्म १११
. पांडु का संन्यास–कथन, फिर वानप्रस्थी बनकर पांडवों की उत्पत्ति का उपाय ११२
. राजा पांडु की मृत्यु, पांडवों का हस्तिनापुर आगमन ११७
. बच्चों की क्रीड़ा और ईर्ष्या–द्वेष ११७
. कृपाचार्य, द्रोणाचार्य और अश्वत्थामा की उत्पत्ति ११८
. द्रोण का द्रुपद से तिरस्कृत होकर भीष्म द्वारा स्वागत १२०
. कौरव–पांडव कुमारों के शिक्षण–परीक्षण तथा एकलव्य १२२
. राजकुमारों का अस्त्र–कौशल और कर्ण का आगमन १२४
. द्रोण का द्रुपद से बदला लेना १२६
. युधिष्ठिर का युवराज पद, पांडवों की वीरता और धृतराष्ट्र की चिंता १२८
. पांडवों का वारणावत–निवास और गुप्त रूप से पलायन १२९
. भीम द्वारा हिडिंब–वध और हिडिंबा से घटोत्कच की उत्पत्ति १३२
. भीम द्वारा बक–वध १३३
. धृष्टद्युम्न और द्रौपदी की उत्पत्ति १३४
. पांडवों की पांचाल–यात्रा और द्रौपदी का पूर्वजन्म वृत्तांत १३५

. गंधर्व द्वारा अर्जुन को तपतीनंदन कुरुवंशी कथन १३६
. वसिष्ठ-विश्वामित्र द्वंद्व, ब्राह्मण पुरोहित का महत्त्व १३८
. कल्माषपाद का शक्ति से शापित, वसिष्ठ से उद्धार होना १३९
. और्व का कोप तथा पितरों का क्षमा करने का उपदेश १४०
. और्व का क्रोध समुद्र में बड़वानल बना १४२
. पांडवों की पांचाल-यात्रा तथा स्वयंवर १४३
. पांचों पांडवों का द्रौपदी के प्रति आकर्षण और विवाह १४४
. पांडवों को जीवित तथा प्रतिष्ठित जानकर कौरवों को चिंता १४७
. भीष्म की सम्मति से पांडवों को आधा राज्य दिया गया १४८
. पांडवों का द्रौपदी के साथ रहने का नियम १४९
. अर्जुन द्वारा नियम-भंग और उनका बारह वर्ष का वनवास १४९
. अर्जुन की तीर्थ यात्रा और उलूपी तथा चित्रांगदा से परिणय १५०
. सुभद्रा-हरण १५१
. खांडववन का दाह १५३

दूसरा : सभा पर्व

. मय द्वारा सभाभवन का निर्माण १५५
. नारद का युधिष्ठिर को राजनीति का उपदेश १५६
. राजसूय यज्ञ का संकेत १५७
. राजसूय यज्ञ के लिए श्रीकृष्ण की सम्मति १५८
. युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन और श्रीकृष्ण के विचार तथा जरासंध का जन्म १६०
. श्रीकृष्ण, भीम और अर्जुन की मगध-यात्रा और जरासंध-वध १६२
. दिग्विजय की तैयारी और दिग्विजय १६४
. अर्जुन की बृहत्तर उत्तर दिशा पर विजय १६५
. भीम की पूर्व दिशा के देशों पर विजय १६७
. सहदेव की दक्षिण दिशा पर विजय १६८
. नकुल की पश्चिम दिशा पर विजय १६९
. यज्ञ का आरंभ १७०
. श्रीकृष्ण की अग्रपूजा, शिशुपाल का आक्षेप और उसका वध १७१

. यज्ञ समापन, आगंतुकों का प्रस्थान तथा युधिष्ठिर का दुख १७५
. दुर्योधन का सभाभवन में भ्रम और मनस्ताप १७६
. धृतराष्ट्र और दुर्योधन की बातचीत १७७
. विदुर द्वारा निमंत्रण पाकर युधिष्ठिर का हस्तिनापुर आना १८०
. जुआ प्रारंभ और युधिष्ठिर की पूरी हार १८१
. द्रौपदी का चीर-हरण १८३
. धृतराष्ट्र का पांडवों के साथ उत्तम बरताव १८७
. दोबारा जुआ का खेल और पांडवों का वनवास १९०

तीसरा : वन पर्व

. तृष्णा-त्याग, अतिथि-सत्कार, सम्यक आचरण और सूर्य की बटलोई १९५
. धृतराष्ट्र का विदुर पर क्रोध और पुनः उनसे क्षमा मांगना २००
. दुर्योधन का असंतोष, वेदव्यास और मैत्रेय की सीख २०१
. श्रीकृष्ण का सर्वेश्वरत्व, द्रौपदी का मनस्ताप और उसे संतोष देना २०३
. जुआ के समय हस्तिनापुर में श्रीकृष्ण के अनुपस्थित होने का कारण २०६
. मार्कण्डेय और बक के उत्तम उपदेश २०८
. द्रौपदी और युधिष्ठिर के क्रोध और क्षमा पर विचार २१०
. द्रौपदी का दैववाद से हटकर कर्म करने पर बल २१३
. भीम की ललकार और युधिष्ठिर का उन्हें शांत करना २१८
. अर्जुन का हिमालय और स्वर्ग में जाकर अस्त्र-शस्त्र विद्या सीखना २२०
. नलोपाख्यान की प्रस्तावना २२५
. नल और दमयंती का विवाह २२६
. कलियुग का नल पर प्रकोप २२९
. दमयंती की सहनशीलता और पतिपरायणता अद्‌भुत २३१
. कर्कोटक नाग से नल को आश्वासन २३४
. दमयंती और नल की खोज २३५
. नल तथा दमयंती का मिलन तथा नल की राज्य-प्राप्ति २४०
. पुलस्त्य द्वारा भीष्म के लिए कहे गये तीर्थों का विवरण २४३

. धौम्य का तीर्थ-वर्णन २४७
. युधिष्ठिर की तीर्थ-यात्रा, अगस्त्य और परशुराम के उपाख्यान २४९
. महर्षि अगस्त्य का महत्त्व २५३
. राजा सगर का यज्ञ और भगीरथ के तप से गंगावतरण २५५
. ऋष्य शृंग और अंगदेश के राजा लोमपाद २५७
. जमदग्नि, पत्नी-रेणुका, पुत्र-परशुराम २६०
. प्रभास क्षेत्र में यादवों का मिलना, च्यवन की कहानी २६१
. मांधाता की विचित्र उत्पत्ति और प्रभुत्व २६३
. राजा सोमक की कथा २६५
. इंद्र और अग्नि द्वारा राजा उशीनर की परीक्षा २६६
. अष्टावक्र और बंदी का जनक-सभा में शास्त्रार्थ २६७
. लक्ष्य पाने के लिए सही रास्ता अपनाना पड़ेगा २७५
. पांडवों की उत्तराखंड-यात्रा २७७
. गंधमादन की यात्रा, भीम की हनुमान जी से भेंट २७९
. पांडवों को आर्ष्टिषेण और कुबेर के उपदेश २८१
. अर्जुन का गंधमादन पर्वत पर भाइयों से मिलकर द्वैतवन में आना २८४
. युधिष्ठिर और नहुष का प्रश्नोत्तर २८५
. अरिष्टनेमि और अत्रिमुनि के ब्रह्म और क्षत्रबल २८८
. तार्क्ष्य मुनि और सरस्वती संवाद २९०
. मनु, मत्स्य और जल प्रलय २९०
. प्रलय काल में बालमुकुंद और मार्कण्डेय २९२
. कलियुग, कल्कि अवतार और उपदेश २९५
. लंबे जीवन में दुख और सुख क्या हैं? २९६
. बड़ा वह है जो विनम्र है, सुहोत्र और शिबि २९८
. दान और सुकीर्ति की प्रशंसा २९९
. धुंधुमार की कथा ३०१
. कौशिक ब्राह्मण, पतिव्रता स्त्री और धर्मव्याध के उपदेश ३०१
. सत्यभामा के सामने द्रौपदी का पातिव्रत्य पर प्रवचन ३१०
. कर्ण, शकुनि तथा सेना सहित दुर्योधन की घोष-यात्रा, द्वैतवन प्रस्थान ३१३

. दुर्योधन को गंधर्वों की कैद से अर्जुन का छुड़ाना ३१४
. दुर्योधन का क्षोभ, आमरण अनशन की प्रतिज्ञा, फिर सामान्य होना ३१६
. भीष्म की दुर्योधन को सलाह तथा कर्ण की दिग्विजय ३१८
. दुर्योधन का वैष्णव यज्ञ तथा कर्ण की अर्जुन को मारने की प्रतिज्ञा ३१९
. युधिष्ठिर का द्रावक स्वप्न, मुद्गल की उच्च दृष्टि ३२०
. दुर्वासा, दुर्योधन, द्रौपदी और दीनदयाल श्रीकृष्ण ३२३
. जयद्रथ द्वारा द्रौपदीहरण और निवारण ३२४
. रामोपाख्यान ३२५
. सावित्री और सत्यवान ३२६
. यक्ष प्रश्न और युधिष्ठिर उत्तर ३३१

चौथा : विराट पर्व

. पांचों पांडवों और द्रौपदी के अज्ञातवास के कार्य ३४१
. राजदरबार में रहने के लिए धौम्य का उपदेश ३४२
. विराट-नरेश के यहां पांचों पांडवों की व्यवस्था ३४४
. ब्रह्ममहोत्सव में भीम द्वारा मल्ल जीमूत की पराजय ३४६
. कीचक का द्रौपदी पर मोहित होना और भीम द्वारा उसका वध ३४६
. गोहरण तथा उसकी मुक्ति और तेरह वर्ष की अवधि की समाप्ति ३४८

पांचवां : उद्योग पर्व

. श्रीकृष्ण, बलराम, सात्यकि और द्रुपद के भाषण ३५५
. श्रीकृष्ण की दुर्योधन और अर्जुन को सहायता ३५९
. इंद्र पत्नी शची सहित कैसे दुख उठाये? ३६२
. पांडव और कौरव की क्रमशः सात और ग्यारह अक्षौहिणी सेना ३६५
. द्रुपद के पुरोहित का कौरव-सभा में भाषण और वापसी ३६६
. संधि के लिए संजय की सीख और श्रीकृष्ण का उत्तर ३६८
. संजय की विदाई और युधिष्ठिर का कौरवों के लिए संदेश ३७५

. संजय का राजा धृतराष्ट्र को सलाह देना ३७६
. विदुर के उपदेश ३७७
. विदुर के उपदेश ३८२
. विदुर के उपदेश ३८५
. सनत्सुजात का आत्मज्ञान संबंधी उपदेश ३९१
. सनत्सुजात का ब्रह्मज्ञान-उपदेश ३९६
. कौरव-सभा का झमेला ३९७
. श्रीकृष्ण का हस्तिनापुर जाते समय युधिष्ठिर, भीम, नकुल, द्रौपदी आदि के विचार जानना ४०४
. श्रीकृष्ण के रास्ते में शकुन-अपशकुन एवं स्वागत ४०९
. धृतराष्ट्र के भ्रम का विदुर द्वारा निराकरण ४१०
. दुर्योधन की बुरी नियति, धृतराष्ट्र और भीष्म की फटकार ४११
. श्रीकृष्ण का धृतराष्ट्र के राजभवन में स्वागत ४१३
. श्रीकृष्ण का दुर्योधन का निमंत्रण त्यागकर विदुर के घर भोजन करना ४१३
. श्रीकृष्ण का कौरव-सभा में महत्त्वपूर्ण भाषण ४१६
. धृतराष्ट्र के आग्रह से श्रीकृष्ण का दुर्योधन को समझाना ४१९
. कुंती का श्रीकृष्ण द्वारा अपने पुत्रों के लिए संदेश ४२१
. श्रीकृष्ण और कुंती का कर्ण को अपने पक्ष में लाने का प्रयास ४२२
. श्रीकृष्ण द्वारा पांडवों के सामने भीष्म, द्रोण, विदुर, गांधारी तथा धृतराष्ट्र का मंतव्य कहना ४२४
. युधिष्ठिर का सेना सहित कुरुक्षेत्र में पड़ाव ४२९
. दुर्योधन की सेना का कुरुक्षेत्र में पड़ाव और सेनापतियों का अभिषेक ४३०
. युधिष्ठिर का अनुताप, अंततः युद्ध की तैयारी ४३२
. युधिष्ठिर द्वारा सेनापतियों का अभिषेक और बलराम का पांडवों के पास आकर चले जाना ४३३
. विदर्भ-नरेश रुक्मी की सहायता पांडव-कौरव ने नहीं ली ४३४
. दुर्योधन का उलूक को दूत बनाकर पांडवों को संदेश भेजना ४३६
. पांडवों का उलूक द्वारा दुर्योधन को संदेश ४४१
. पांडव तथा कौरव के रथी-महारथी,भीष्म-कर्ण के विवाद का शमन ४४३

. अंबा के तीन जन्मों का उपाख्यान ४४६
. दोनों पक्षों के लड़ाकुओं के मनसूबे और युद्ध क्षेत्र में आ डटना ४४९

छठां : भीष्म पर्व

. दोनों पक्षों का मिलकर युद्ध के नियम बनाना ४५१
. दिव्य दृष्टि और असंभव उत्पात-सूचक की कल्पना ४५१
. संजय द्वारा भूमि, द्वीप आदि का वर्णन ४५३
. अर्जुन का तथ्यपरक कथन और विषाद ४५४
. श्रीकृष्ण का उत्तर ४५६
. अमृतमय उपदेश ४५९
. कर्म करे औ रहे अकर्मी ४६२
. अवतारवाद; कर्म, अकर्म और विकर्म ४६४
. स्वरूपज्ञानपूर्वक अनासक्ति की रहनी यज्ञ है ४६७
. सांख्ययोग और कर्मयोग का समन्वय ४७०
. जीवन में संतुलन और स्वरूपस्थिति ४७२
. श्रीकृष्ण पर आरोपित विभूति ४७५
. उत्तम भक्त का लक्षण और प्राप्ति की परख ४८१
. क्षेत्र-क्षेत्रज्ञ एवं जड़-चेतन-विवेक ४८२
. तीनों गुण वालों की गति और गुणातीत दशा ४८४
. संसार-वृक्ष की जड़-आसक्ति वैराग्य-कुल्हाड़ी से कटती है ४८६
. दैवासुर संपदा ४८८
. श्रद्धा, यज्ञ, दान, तप, भोजन आदि में त्रिगुण विवेचन ४९०
. आसक्ति-कामना त्यागकर कर्म करना आवश्यक ४९२
. ज्ञान, कर्म, मनुष्य, बुद्धि, धारणा तथा सुख तीन गुणों से व्याप्त है ४९५
. वर्ण-कर्म की स्वाभाविकता और अपनी जगह पर सबका कल्याण संभव ४९६
. ब्रह्मभूत एवं आत्मलीनता की रहनी ४९७
. श्रीकृष्ण-भक्ति पर जोर ४९८
. गीता सुनने का अधिकारी और उसकी महिमा ४९९

. युधिष्ठिर का भीष्म, द्रोण, कृप तथा शल्य से युद्ध के लिए आज्ञा मांगना ५०१
. आठ दिनों के यद्ध का संक्षिप्त विवरण ५०५
. नवें तथा दसवें दिन का युद्ध और भीष्म पितामह का घायल होकर पड़ जाना ५१०

सातवां : द्रोण पर्व

. द्रोणाचार्य का प्रधान सेनापति पद पर अभिषेक और युद्ध ५१५
. महाभारत युद्ध में रथ में चलने वाले घोड़ों के रंग ५१६
. अभिमन्यु का घोर युद्ध, अंततः कौरवों से घिरकर मृत्यु ५१९
. शोक-नाश के लिए पंद्रह राजाओं तथा सोलहवें में परशुराम की मृत्यु का उदाहरण ५२०
. अर्जुन द्वारा जयद्रथ का मारा जाना ५२१
. लंबे युद्ध के बाद कर्ण की अमोघ शक्ति से घटोत्कच मारा गया ५२३
. रात्रि-युद्ध, दुर्योधन-द्रोण में व्यंग्यात्मक नोक-झोंक तथा विराट और द्रुपद का मारा जाना ५२७
. दुर्योधन और सात्यकि का वार्तालाप तथा द्रोणाचार्य की हत्या ५२८
. धृष्टद्युम्न और सात्यकि की तू-तू मैं-मैं, अश्वत्थामा का पांडव-सेना का संहार और शिव महिमा के साथ द्रोण पर्व समाप्त ५३०

आठवां : कर्ण पर्व

. शल्य और कर्ण की तू-तू मैं-मैं तथा मद्रदेश की निंदा ५३३
. कर्ण की मार से युधिष्ठिर घायल, पांडव सेना ध्वस्त, भीम का पराक्रम, युधिष्ठिर-अर्जुन में विवाद ५४८
. भीम का दुःशासन को मारकर रक्तपान तथा अश्वत्थामा का दुर्योधन से संधि कर लेने का प्रस्ताव ५५१
. अर्जुन द्वारा कर्ण की रणनीति-विरुद्ध हत्या ५५३

नवां : शल्य पर्व

. दुर्योधन-भीम का गदा युद्ध, भीम द्वारा अनीतिपूर्वक दुर्योधन का अंत ५५५

. श्रीकृष्ण का धृतराष्ट्र तथा गांधारी को सांत्वना देना ५५९

दसवां : सौप्तिक पर्व

. अश्वत्थामा द्वारा पांचालों और पांडव-परिवार की हत्या ५६१

ग्यारहवां : स्त्री पर्व

. स्त्रियों का रुदन, युधिष्ठिर का पश्चाताप, श्रीकृष्ण के परिवार के विनष्ट होने संबंधी गांधारी का शाप ५६३

बारहवां : शांति पर्व

(राजधर्म खंड)

. युधिष्ठिर का कर्ण के विषय में अधिक शोक ५६७
. युधिष्ठिर का वैराग्य-उद्‌गार; अर्जुन, भीम, नकुल तथा सहदेव का उन्हें समझाना ५६९
. द्रौपदी, अर्जुन और भीम का राजधर्म पर जोर, किंतु युधिष्ठिर का त्याग-धर्म का आग्रह ५७४
. अर्जुन का युधिष्ठिर को समझाना और उनका उत्तर ५७७
. युधिष्ठिर की घोर ग्लानि, देवस्थान, वेदव्यास तथा श्रीकृष्ण का समझाना ५८१
. युधिष्ठिर की शोभायात्रा, तर्कशील ब्राह्मण द्वारा आलोचना ५८७
. मृतकों का श्राद्ध-कर्म आदि ५९०
. राजधर्म के उपदेश ५९१
. राजा और राज्य की उत्पत्ति तथा राजतंत्र का विधान ५९६
. वर्ण तथा आश्रम पर तात्कालिक दृष्टिकोण ६०२
. क्षात्रधर्म सर्वोपरि है, उसी से बर्बर और सामान्य जनता का हित है ६०६
. राजा और राजशासन की आवश्यकता ६०९
. राजा के कर्तव्य, राजा ही युग बनाता है ६१३
. राजा के छत्तीस गुण ६१५
. राजा के कर्तव्य तथा उसके लिए एक पुरोहित-महामंत्री की आवश्यकता ६१६
. ब्राह्मण-लक्षण, राजधर्म, मृत्यु और ब्रह्मत्व तथा विश्वास-आविश्वास ६१८

विषय-सूची

. देवर्षि नारद का श्रीकृष्ण को परिवार सम्हालने की सीख देना ६२०

. राजा के सहायक मंत्री कैसे हों तथा राजा कैसे शासन करे? ६२३
. राजा क्षेमदर्शी के लिए कालकवृक्षीय मुनि का उपदेश ६२७
. गणतंत्र राज्य और उसकी नीति ६२८
. माता, पिता और गुरु-सेवा का महत्त्व ६३०
. सत्य-असत्य और धर्म का विवेचन ६३१
. दुखों से छूटने के उपाय ६३२
. शेर और सियार के रूपक में मनुष्यों के स्वभाव का परिचय ६३४
. आलस्य-त्याग और विनम्रता की सीख के लिए ऊंट, समुद्र और नदियों का उदाहरण ६३९
. विवेकवान अपने निंदक की उपेक्षा कर देता है ६४१
. सेवक तथा मंत्री के गुण, राजकाज और दंड की उपादेयता ६४२
. धर्म, अर्थ और काम पर विचार ६४४
. शील और आशा पर विवेचन ६४५
. आपत्तिकाल में राजा प्रजा से धन का संग्रह करे ६४६

(आपद्धर्म खंड)

. आपत्तिग्रस्त राजा के कर्तव्य तथा धर्म का स्वरूप ६४७
. राजा के लिए कोष-संग्रह आवश्यक तथा अमर्यादित दस्युवृत्ति की निंदा ६५०
. बल का महत्त्व और डाकुओं में भी नीति-नियम ६५१
. राजा का धन-संचय और देश-काल के संबंध में तीन मत्स्यों की कथा ६५२
. शत्रुओं से घिरे हुए राजा के बोध के लिए चूहे-बिलाव का आख्यान ६५३
. शत्रु पर अविश्वास, राजा ब्रह्मदत्त तथा पूजनी चिड़िया का उपाख्यान ६६०
. भारद्वाज कणिक की तीखी राजनीति ६६६
. विश्वामित्र ने भूख से पीड़ित हो कुत्ते की जांघ खायी ६७१
. शास्त्र और बुद्धि दोनों का प्रयोग कर राजा शासन करे ६७२
. कपोत का त्याग तथा जनमेजय का ब्रह्म-हत्या से उद्धार ६७४
. गीध तथा गीदड़ के मुख से विज्ञानवाद का कथन ६७५
. नारद की चुगुली, वायु-सेमल का संघर्ष ६७८

. लोभ सभी विकारों की जड़, इससे परे शुद्ध अध्यात्म ६७९
. दम की महिमा, मोक्ष-रहनी और तप का महत्त्व ६८१
. सत्य तथा उसकी रहनी ६८३
. तेरह दोष, उनकी उत्पत्ति तथा उनके नाश के साधन और नीच मनुष्य के लक्षण ६८४
. खड्ग की उत्पत्ति तथा उसकी यात्रा ६८६
. धर्म, अर्थ और काम का मूल्यांकन ६८७
. कैसा मित्र होना चाहिए, कृतघ्न सबसे पतित ६८९

(मोक्ष धर्म खंड)

50. मोह-शोक-रहित रहने के उपाय ६९१
. आत्मज्ञान तथा आत्मस्थिति से मुक्ति है, संतान से उद्धार नहीं 695
. अकिंचनता परम सुख है ६९७
. मंकि मुनि-मंखलि गोशाल का वैराग्य ६९९
. बोध्य मुनि के छह गुरु, वैराग्योपदेश ७०२
. एक वैराग्यवान मुनि द्वारा अजगर वृत्ति का वर्णन ७०४
. मनुष्य के दो हाथ हैं, वह निराश न होकर श्रम करे, काश्यप को शृगाल का उपदेश ७०६
. कर्म-फल-भोग तथा उससे मुक्त होकर दिव्य स्थिति ७०९
. आत्मा की नित्य सत्ता और वासना त्यागकर मोक्ष ७१०
. ब्रह्मा से उत्पन्न होने से मूलतः सब मनुष्य ब्राह्मण हैं, अंततः और शुद्धतः आत्मलीन ब्राह्मण है ७१२
. सत्य की प्रतिष्ठा और सुख-दुख की व्याख्या ७१४
. हिमालय के आसपास उत्तम देश ७१६
. गृहस्थ-सदाचार, पाप छिपाना पतन का रास्ता है ७१७
. अध्यात्मज्ञान का स्वरूप ७१९
. ध्यान-योग तथा उसका उत्तम फल ७२२
. आत्मलीनता के सामने सभी स्वर्ग नरकतुल्य हैं और संहिता-जापक कैवल्य पद पाता है ७२३
. आत्मज्ञान और आत्मस्थिति पर मनु के उपदेश ७२८
. श्रीकृष्ण में अनंत ब्रह्मांड नायकत्व का प्रतिपादन ७३३
. सदाचार और निर्विषय बोध मोक्ष-पथ है ७३५

. ब्रह्मचर्य, वैराग्य तथा आत्मज्ञान से परमपद की प्राप्ति ७३८
. सांख्यवादी पंचशिख का आध्यात्मिक उपदेश ७४२
. आंखों वाला और अंधा एक साथ कौन ? दम का महत्त्व ७४५
. गृहस्थ धर्म, असली तप तथा यज्ञ ७४८
. विभिन्न मत का सार स्वरूपज्ञान तथा प्रह्लाद का इंद्र को उपदेश ७४८
. इंद्र की बाल-बुद्धि पर बलि की फटकार, मायाक्षणभंगुर है ७५२
. बलि और नमुचि के कल्याणकारी प्रवचन ७५५
. ग्रहण और त्याग करने योग्य आचरण ७५८
. जैगीषव्य और नारद के सद्‌गुणों का चित्रण ७६१
. काल, सृष्टि आदि का वर्णन तथा काल-नदी से पार होने का उपाय ७६३
. सांख्य-योग का फल ७६४
. शब्द ब्रह्म को लांघकर आत्मलीनता है ७६६
. चारों आश्रमों के कर्तव्य एवं आचरण ७६९
. आत्मज्ञान और आत्मसाक्षात्कार की महत्ता ७७२
. वैराग्य-कुल्हाड़ी से काम-वृक्ष काटकर मोक्ष की प्राप्ति तथा मृत्यु प्रकृति का उत्तम विधान ७७५
. धर्म के विषय में संशय, जाजलि का अभिमान, तुलाधार के वक्तव्य में सबका शमन ७७६
. हिंसा-पूर्ण पूजा महा पाप है, राजा विचख्नु ७८३
. चिरकारी की प्रशंसा, सोच-समझकर काम करना चाहिए ७८५
. राजा किसी को मृत्युदंड देकर उसका मूलोच्छेद न करे ७८८
. कपिल-स्यूमरश्मि-संवाद तथा कर्म और ज्ञान का समन्वय ७९०
. मोक्ष-मार्ग की रहनी का वर्णन ७९७
. इंद्र और वृत्र का युद्ध तथा वृत्र का वध ८०१
. महादेव द्वारा दक्ष प्रजापति का यज्ञविध्वंस ८०४
. समंग, नारद और अरिष्टनेमि के वैराग्यपूर्ण प्रवचन ८०६
. उसना शुक्र हो गये ८१०
. पराशर मुनि का जनक को उपदेश, पराशर गीता ८१०
. हंस के अमृत उपदेश, हंसगीता ८१३

. सांख्य और योग ८१६
. क्षर, अक्षर तथा सांख्य विवेचन ८२०
. सांख्य मत और याज्ञवल्क्य ८२२
. राजा जनक और संन्यासिनी सुलभा का संवाद ८२४
. वेदव्यास द्वारा अपने पुत्र को धर्मपूर्ण वैराग्य का उपदेश ८३०
. शुकदेव का जन्म और आत्मज्ञान में दृढ़ता ८३२
. वेदव्यास का शिष्यों को उपदेश तथा नारद का शुकदेव को उपदेश और शुकदेव का निर्वाण ८३४
. पांचरात्र भागवतों एवं वैष्णवों की भावना ८३९
. उंछवृत्ति और शिलवृत्ति का महत्त्व ८४७

तेरहवां : अनुशासन पर्व

. हमारे सुख-दुख के कारण हमारे कर्म हैं ८५५
. अतिथि-सत्कार का अतिरेक ८५६
. विश्वामित्र का महत्त्व ८५८
. स्वामिभक्ति और पुरुषार्थ पर बल ८६१
. कर्म-फल और सदाचार का वर्णन तथा शिव-सहस्रनाम ८६२
. पति-पत्नी का सहधर्म कैसे ? ८६४
. ब्राह्मण और तीर्थ की महिमा, सदाचार का महत्त्व ८६६
. स्त्रियों की चरित्र-रक्षा की जाय ८७८
. विवाह और उत्तराधिकार पर विचार ८७१
. वर्णसंकर-विवरण, अंततः मानवता की विजय ८७७
. गाय की महिमा में च्यवन मुनि, मछुआरे तथा नहुष की लपेट ८७९
. विश्वामित्र की विशेषता ८८०
. दान और गायों की महिमा ८८३
. स्वर्ण-दान और स्वर्ण-उत्पत्ति की कल्पना ८८६
. श्राद्ध कर्म ८८९
. त्याग का महत्त्व और बुराइयों से बचने का निर्देश ८९१
. छाता, जूते की उत्पत्ति, उनके दान तथा संन्यास-धर्म का वर्णन ८९४

. अनेक दान के महत्त्व तथा उत्तम गति पाने के लिए बताने वाला इंद्र-गौतम के संवाद का रूपक ८९८
. अनशन के विषय में अतिशयोक्ति तथा सदाचार का महत्त्व ९०३
. छोटे-बड़े भाई तथा गुरु-शिष्य आदि सबके लिए अमृत उपदेश ९०७
. उपवास तथा व्रत के फल की अतिशयोक्ति तथा मानस-तीर्थ की सत्यता ९०८
. व्रत, उपवास, कर्म-फल-भोग आदि पर सत्य तथा भावुकतापूर्ण कथन ९१०
. मद्य, मांस तथा हिंसा का त्याग सच्ची मानवता है ९११
. देहासक्ति शूद्रत्व है तथा ब्रह्मलीनता ब्राह्मणत्व है ९१३
. गृहस्थधर्म और पातिव्रत्य ९१४
. हमारे दुखी रहने के अनेक कारण ९१५
. एक सौ पचीसवें से एक सौ इकसठवें अध्यायों की विषय-सूची ९१७
. भीष्म का निधन तथा अंत्येष्टि-संस्कार ९१८

चौदहवां : आश्वमेधिक पर्व

. युधिष्ठिर का विलाप, वेदव्यास का उन्हें अश्वमेध यज्ञ करने की राय देना ९२१
. कुटिलता और ममता का त्याग और सरलता ब्राह्मी स्थिति है ९२६
. अनुगीता का आरंभ, ज्ञान-वैराग्य के उपदेश ९२९
. जीवन्मुक्त कौन ? ९३१
. आत्मा ही परम है; कलह नहीं, साधना करो ९३३
. संसार में मेरा कहीं कुछ नहीं है, यही तथ्य है ९३५
. संन्यासी की रहनी ९३७
. अनेक संशय और उत्तम समाधान ९३८
. श्रीकृष्ण का द्वारका पहुंचकर पिता के सामने महाभारत युद्ध का विवरण देना ९४२
. अश्वमेध यज्ञ के लिए दिग्विजय ९४५

. युधिष्ठिर का यज्ञ; नेवला तथा एक सेर सत्तू का श्रेष्ठ यज्ञ ९४६
. हिंसायुक्त यज्ञ का निषेध ९४९

पंद्रहवां : आश्रमवासिक पर्व

. धृतराष्ट्र के साथ पाण्डवों का बरताव ९५३
. राजा धृतराष्ट्र का वन जाने का आग्रह और उन्हें अनुमति ९५५
. धृतराष्ट्र का युधिष्ठिर को राजनीति के उपदेश ९५८
. धृतराष्ट्र का पुरवासियों से भी अनुमति लेना तथा मृतजनों का श्राद्ध करना ९६०
. धृतराष्ट्र, गांधारी, कुंती, विदुर, संजय आदि का वनगमन ९६५
. पांडवों का वन में जाकर धृतराष्ट्र आदि से मिलना ९६८
. धृतराष्ट्र, गांधारी तथा कुंती का दावाग्नि में जलकर मर जाना ९७०

सोलहवां : मौसल पर्व

. यादवों का महाविनाश, बलराम तथा श्रीकृष्ण का प्राण त्याग ९७१
. यादववंश की स्त्रियों, बूढ़ों, बच्चों को लेकर अर्जुन का द्वारका से प्रस्थान ९७५

सत्तरहवां : महाप्रस्थानिक पर्व

. द्रौपदी सहित पांडवों का महाप्रस्थान ९७८

अठारहवां : स्वर्गारोहण पर्व

. कौरव-पांडव का स्वर्गवास ९८३
. यहां महाभारत पूरा हुआ ९८५

महाभारत मीमांसा